शोध-चिंतन पत्रिका: विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित ई शोध पत्रिका
वर्ष: 3, अंक:4; जनवरी-जून, 2022
पृष्ठ संख्या : 10-21

हिन्दी डायस्पोरा में अस्मिता और भाषा

✍ डॉ. दुर्गा प्रसाद सिंह

शोध-सार:

यह आलेख भाषा संस्कृति और अस्मिता के दायरे में इसके भविष्य को समझने की कोशिश है। हिन्दी भाषा की अपनी एक संस्कृति है वह संस्कृति है इसकी भाव-प्रधानता। हिन्दी का नेरेटिव इसका गवाह है। जिन परम्पराओं से हिन्दी की संस्कृति बनी उसकी किस्सागोई पर गौर करने की जरूरत है। भारतीय परंपरा और दर्शन में दुःख और मृत्यु जैसी धारणाओं पर हजारों साल विमर्श चलता रहा है। इसके बावजूद हमारे क्लासिक हमेशा सुखांत थे। लोक कथा की परम्परा भारत और हिन्दी की संस्कृति की सबसे मुकम्मिल व्याख्या करती है। आज हमारे सिनेमा का नेरेटिव पूरी दुनिया को आकर्षित करता है। यही नहीं पश्चिम भारत की ओर एक उम्मीद और आशा से देखता है। वर्तमान समय में पारम्परिक ज्ञान और समझ के प्रति धारणाएँ बदल रही हैं।

बीज शब्द: *हिन्दी डायस्पोरा समाज, संस्कृति, भारत, लोक परंपरा*

प्रस्तावना :

डायस्पोरा की अस्मिता में संस्कृति और भाषा का अहम आयाम हैं। हिन्दी भाषा की अपनी एक संस्कृति है, वह है इसकी भाव प्रधानता। हिन्दी का नेरेटिव इसका गवाह है। जिन परम्पराओं से हिन्दी की संस्कृति बनी, उसकी किस्सागोई पर गौर करने की जरूरत है। भारतीय परंपरा और दर्शन में दुःख और मृत्यु जैसी धारणाओं पर हजारों साल विमर्श चलता रहा है। इसके बावजूद हमारे क्लासिक हमेशा सुखांत थे। लोक कथा की परम्परा भारत और हिन्दी की संस्कृति की सबसे मुकम्मिल व्याख्या करती है। आज हमारे सिनेमा का नेरेटिव पूरी दुनिया को आकर्षित करता है। यही नहीं पश्चिम भारत की ओर एक उम्मीद और आशा से देखता है।

विश्लेषण :

वर्तमान समय में पारम्परिक ज्ञान और समझ के प्रति धारणाएँ बदल रही हैं। सबसे ख़ास बात यह है कि हमारे मन के बीच ह्रदय के समझ की संस्कृति है। गाँधी के वे शब्द बेहद प्रासंगिक हैं कि 'मन की संस्कृति ह्रदय के अधीन होनी चाहिए (Gandhi 1968)। इन सब के बीच हिन्दी डायस्पोरा-समाज ने अपनी पहचान कैसे जारी रखी है, यह जानना दिलचस्प है।

संस्कृति और भाषा :

संस्कृति को रचने में भाषा की भूमिका इतनी निर्णायक होती है कि अतीत में अस्मिता और राष्ट्रों का निर्माण भाषा के दायरों में हुआ। भारतीय सन्दर्भ में रेनेसां, बंग-भंग, स्वाधीनता आन्दोलन क्षेत्रीयता आदि भाषा से ही उपजी धाराणाएँ हैं। यूरोप में राष्ट्रीयता की अस्मिता बनाने में भाषा की अहम भूमिका थी। बेनेडिक्ट एंडरसन ने यूरोपीय राष्ट्रीयता को इसी सन्दर्भ में समझने की कोशिश की है। मध्यकालीन यूरोप में लैटिन के बर्चस्व के बीच छापे-खाने के उदय को जर्मन, फ्रेंच ,अंगरेजी, स्पेनिश और पुर्तगाली मीडिया को विकास का प्रमुख कारण माना। विभिन्न भाषाओं के मीडिया ने यूरोप की क्षेत्रीय अस्मिता और भू-राजनीतिक सीमाओं का निर्माण किया। उनका मानना था कि लैटिन का यूरोपीय भाषाओ में रूपांतरण, भाषा का विकास मात्र नहीं था, बल्कि यह अस्मिता का भी विकास था, जिसकी परिणति राष्ट्रों के रूप में हुई। भाषा के नजरिये से संस्कृति और समाज को देखना दिलचस्प होता है। सभ्यता और समाज के तमाम भौतिक विकास की कल्पना भाषा के बिना करनी मुश्किल है। विज्ञान, तकनीकी से लेकर भौतिक विकास की कल्पना में भाषा का केन्द्रीय योगदान है। मनुष्य ने ज्ञान की परंपरा का विकास भी भाषा के ही माध्यम से किया है।

मनोवैज्ञानिक एरिक एरिक्सन की यह बात कि 'मनुष्य के सामाजिक जंगल में जिंदा रहने की अनुभूति अस्मिता के बिना संभव नहीं है' (Erikson1968:38) को प्रवासियों के सन्दर्भ के ज्यादा सार्थक

ढंग से समझा जा सकता है। अपने परिवेश से विस्थापित प्रवासियों में संस्कृति और अस्मिता का प्रश्न महत्वपूर्ण हो जाता है। 'संस्कृति-वंचना' इसकी भूख को बनाती है। दूसरे देश के प्रवासन के परिणाम स्वरूप दो संस्कृतियों का द्वन्द इसकी सहज परिणति है। इस द्वन्द के बीच अस्मिता का सवाल स्वाभाविक है। संस्कृति और भाषा उस अस्मिता की निरंतरता का माध्यम बनती हैं। भूमंडलीकरण के दौर में अस्मिता के बनने –मिटने की प्रक्रिया में यह प्रश्न और भी प्रासंगिक है।

भारत एक देश नहीं बल्कि सांस्कृतिक फिनेमिना है। इसका सांस्कृतिक प्रभाव गहरा है। रोम्यां रोलां का यह कहना गलत नहीं कि 'सभ्यता और संस्कृति के इतिहास में मनुष्य की कल्पना और सपनो को जगह मिली तो वह भारत ही है' (Romain Rolland:The Oxford Centre for Hindu Studies at www.ocvhs.com)। संस्कृति की अभिव्यक्ति का सबसे अहम माध्यम भाषा ही है। हिन्दी दुनिया की सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषाओँ में से एक है। जितने लोग हिन्दी बोलते हैं उनसे ज्यादा लोग हिन्दी को समझते हैं और इससे कहीं ज्यादा लोग संसार में इसका बरताव करते हैं। हाल के दिनों में चीन में भारतीय फिल्मों का बाज़ार बढ़ा, तो सभी का ध्यान गया। पर हिन्दी सिनेमा की उपस्थिति अफ्रीका से लेकर दक्षिण अमेरिका के सूदूर देशों में हमारी कल्पना से ज्यादा है। इन सब की वजह यह है कि तर्क आधारित स्वतंत्रता ही मनुष्य की जरूरत नहीं है, बल्कि सामुदायिकता और सांझापन हमारे अस्तित्व का महत्वपूर्ण हिस्सा है। इसलिए निजी समस्याओं के सारे समाधान निजी नहीं बल्कि सामूहिक भी होते हैं। यह कैसा विरोधाभासी द्वैत है कि पश्चिमी समाज अपनी समस्याओं के समाधान के लिए पूरब की और बढ़ रहा है।

प्रवासन के इतिहास में भारतीय और अस्मिता :

भारतीय सन्दर्भ में डायस्पोरा की अस्मिता का प्रश्न औपनिवेशिक काल से प्रासंगिक है। क्योंकि यही वह समय है जब बड़े पैमाने पर भारतीय अनुबंधित मजदूर के रूप में बसे। ऐतिहासिक नजरिये से दुनिया में भारतीय डायस्पोरा के प्रवासन की दो धाराएँ हैं। एक धारा औपनिवेशिक प्रक्रिया के

दौरान कैरिबियन, फ़िजी, मॉरीशस और अफ्रीका जैसे सुदूर देशों में बसी। दूसरी धारा बीसवीं शताब्दी के उन प्रवासी भारतीयों की है, जो आर्थिक बेहतरी की आकांक्षा लेकर यूरोप और अमेरिका में बसी। दोनों धाराओ में विभिन्नता के बावजूद तमाम समानताएँ भी हैँ। समानता की सबसे अहम ज़मीन है 'अस्मिता' की जिज्ञासा और प्रचलन। आज जब भारतीय प्रवासियों की आर्थिक समृद्धि के साथ 'अस्मिता' का प्रश्न महत्वपूर्ण हो गया है तब इसकी अभिव्यक्ति संस्कृति के अलावा राजनीति के क्षेत्र में भी दिखती है। भाषा अस्मिता की निर्मिति के साथ उसकी अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम भी है। डिजिटल युग की सिकुड़ती दुनिया में बॉलीवुड की बढ़ती लोकप्रियता इसी का उदाहरण है।

अस्मिता किसी देश या समाज की संस्कृति में रहने वाले लोगों के दिल और दिमाग और स्मृतियों में बसती है - गाँधी का यह कथन सात समंदर पार कैरिबियन ईस्ट इंडियन समुदाय के लिए बेहद प्रासंगिक है। गुलामी प्रथा के अन्त ने दुनिया के उपनिवेशों में गिरमिटिया प्रथा की शुरुआत की। सन् 1838 में ब्रिटिश ने कलकत्ता से गयाना के लिए चले समुद्री जहाज से कैरेबियाई देश में ईस्ट-इंडियन समुदाय के अनुबंधित मजदूरों के प्रवास का नया सिलसिला शुरू किया। ये अनुबंधित मजदूर अपने साथ लायी गठरी में ऐसा कुछ नहीं लाये थे, जिससे वे अपनी मिट्टी की याद को जिन्दा रखते। यदि कुछ साथ था तो वह था अपनी स्मृतियाँ। आज लगभग दो सौ साल बाद भी कैरिबियाई भारतीय प्रवासियों ने अपनी संस्कृति को जिस जज़्बे से ज़िंदा रखा,वह इस बात का गवाह है कि दिल और दिमाग की स्मृतियाँ दुनिया की तमाम भौतिक चीजों से ज्यादा गहरी और स्थायी होती हैं।

हिन्दी-संस्कृति का समाज :

संस्कृतियों की निर्मिति में भाषा की भूमिका अहम् होती है। भाषा ही वह माध्यम है, जिससे सामजिक मूल्य एक पीढ़ी से दूसरी पीढी तक निरंतरता पाते हैं। कैरेबियाई देशों जैसे फिजी, सूरीनाम, की तरह ट्रिनिडाड में भोजपुरी का प्रभाव सिर्फ भाषा के स्तर पर ही नहीं, बल्कि यहाँ के सांस्कृतिक

विस्तार में भी दिखाई देता है। इन्हीं सांस्कृतिक मूल्यों के कारण ईस्ट इंडियन समुदाय में परिवार की मजबूत बुनियाद आगे चल कर उनके शैक्षिक विकास का आधार भी बनी। लेकिन सामाजिक विकास में होने वाले परिवर्तनों का गहरा प्रभाव कैरेबियाई देशों की भोजपुरी संस्कृति और भाषा पर भी पड़ा।

भोजपुरी के लोक गीत, कहानियाँ , परम्परा और संगीत ने जिन भारतवंशियों की सामुदायिक अस्मिता को आधार दिया, वही भाषा आगे चल कर उन्हें अपनी शैक्षिक उन्नति में बाधा लगने लगी। बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक में इसाई मिशनरियों ने औपचारिक शिक्षा को आगे बढ़ाने के लिए अंग्रेजी भाषा को माध्यम बनाया। गुलामी की प्रथा के ख़त्म होने के कारण अफ्रीकी मूल के लोग शहरो में बसने लगे थे। परिणामस्वरूप उन्हें शिक्षित होने का अवसर भी पहले मिला। बीसवीं सदी के आरंभिक दशकों तक गन्ने की खेती ख़त्म होने लगी लेकिन भारतीय मूल के लोग शूगर फार्म से निकल कर दक्षिणी त्रिनिदाद के ग्रामीण परिवेश में बस गये। यही समय था जब उन्होंने वैकल्पिक आजीविका की तलाश में शिक्षा पर ध्यान देना शुरू किया। इसी क्रम में उन्होंने अंग्रेजी भाषा के महत्व को महसूस किया; क्योंकि ब्रिटिश उपनिवेश के कारण शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी ही था। अंग्रेजी सीखने की जल्दी में उन्होंने अगली पीढ़ी से भोजपुरी में संवाद बंद कर दिया। भोजपुरी 'संवाद से गोपनीय जीवन की भाषा' बन गयी जिसमें माता-पिता आपस में संवाद किया करते थे। परिणाम स्वरुप भोजपुरी बोलने व समझने वालों की कि संख्या तेजी से कम होती गयी। अगले दो दशकों में भोजपुरी लोक परिदृश्य से लुप्त हो चुका था और जो बचा रह गया, वे थे धार्मिक व् सांस्कृतिक जीवन के पारिभाषिक शब्द, जो आज भी कायम हैं। कैरिबियन में भारतीय संस्कृति की निरंतरता का दायरा लंबा है, इसीलिए यहाँ भोजपुरी के प्राचीन कलेवर सोहर ,गारी से लेकर हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत तक या बालीवुड से लेकर चटनी का नया प्रचलन साथ-साथ देखा जा सकता है। चाहे कोई त्यौहार हो या उत्सव,पूजा हो या कार्निवल सभी पर भारतीय संस्कृति के किसी न किसी आयाम की झलक मिल ही जाती है।

कैरिबियाई देशों में ट्रिनिडाड-टोबैगो ,सूरीनाम और गयाना में आज भी भारतीय प्रवासियों ने अपनी सांस्कृतिक अस्मिता को किसी न किसी रूप में कायम रखा है। यह जानना दिलचस्प है कि कैरिबियाई संस्कृति में अफ़्रीकी संस्कृति की परम्पराओं ने अपनी पहचान कैसे खो दी, जबकि भारतीय संस्कृति की तमाम परम्पराएँ न सिर्फ कायम रहीं बल्कि उन्होंने नये सांस्कृतिक प्रतीक भी निर्मित किये। भारतीय अनुबंधित मजदूर अधिकांशत: ग्रामीण थे। समान सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के कारण वे शूगर-स्टेट के बैरक में भी अपनी संस्कृति, परम्परा, रीति-रिवाज और त्यौहारों को जारी रख सके। इस निरंतरता का सबसे बड़ा कारण था भाषा।

हिन्दी संस्कृति : लोक परिदृश्य

हिन्दी-संस्कृति तमाम बातों से बनती है। भाषा का सफ़र संस्कृति की यात्रा से लिपटा होता है। आज भारत में अनेक स्तर पर परिवर्तन आ रहे हैं। टेक्नोलॉजी का इंटरफेस लोक-परिदृश्य को तेजी से बदल रहा है। सन् 2016 की ग्लोबल रिपोर्ट के अनुसार भारत दुनिया में सबसे ज्यादा इन्टरनेट इस्तेमाल करने वाले देशो में एक है। सोशल मीडिया में करोंड़ों हिन्दीभाषी एक नयी भाषा और संस्कृति की रचना कर रहे हैं; विज्ञापन, विभिन्न माध्यमो में नयी सांस्कृतिक भाषा में संवाद कर रहे हैं। 'हिंगलिश' हिन्दी का एक बरताव ही नहीं, बल्कि यह औपनिवेशिक मूल्यों को भी व्यक्त करता है, इसे संदर्भो में देखे तो भाषा और संस्कृति के नये आयाम उभरते हैं। इन सब के बीच हिन्दी का एक नया लोक परिदृश्य उभर रहा है, जो नयी समझ की मांग करता है। यही नहीं भारतीय संस्कृति का ग्लोबल असर उभर रहा है। इसी का परिणाम है भारत से बाहर हिन्दी तथा इसकी संस्कृति का प्रभाव।

विभिन्न संस्कृतियों का सह अस्तित्व आज के समाज की एक सचाई है। एक दूसरे को प्रभावित करना इसकी सहज परिणति है। हिन्दी प्रवासियो ने दुनिया के तमाम देशों की संस्कृति और समझ को ही नहीं, बल्कि भाषाओं को प्रभावित किया। भाषा में इसकी आभिव्यक्ति और भी दिलचस्प है। यहाँ की क्रियोल संस्कृति में मिश्रण का आयाम उल्लेखनीय है। कैरिबियाई क्षेत्र में 'रोटी' सबसे लोकप्रिय

व्यंजन ही नहीं, बल्कि यह सबसे आम शब्दों में से एक है । हिन्दी के तमाम शब्द वहाँ की भाषा में अपनी जगह बना चुके हैं, जिसे सिर्फ भारतीय ही नहीं बल्कि सभी करते हैं । भारतीय खान-पान की संस्कृति और परंपरा लगातार लोकप्रिय हो रही है । इसके साथ साथ भारतीय रसोई के तमाम शब्द कैरिबियाई ही नहीं बल्कि दुनिया की तमाम भाषाओ में प्रचलित हो रहे हैं । गरम मसाला अंग्रेजी ही नहीं, स्पेनिश भाषा में भी प्रचलित है ।

हिन्दी का नेरेटिव कल्चर :

कहते हैं किस्सागोई मनुष्य की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है, जो हमें इस जीव जगत में सबसे विशिष्ट बनाती है । भारत में किस्सागोई की लम्बी और समृद्ध परंपरा रही है । भारतीय क्लासिक से लेकर जातक और लोक साहित्य की परंपरा में 'कहानी' 'कहने' का पर्याय है । ईश्वर, दर्शन और धर्म की अवधारणा भी किस्सों से समझने की परंपरा रही है । रामचरितमानस उसी का एक उदहारण है । इसका परिचय, हिन्दी का एक महाकाव्य, राम की कथा या महान कालजयी रचना के रूप में हो सकता है । पर यह परिचय पूरा नहीं है, पूरी दुनिया में भारत से जाने वाले गिरमिटिया मजदूर प्रायः सामाजिक आर्थिक रूप से समाज के हाशिये के लोग थे । इनके प्रवासन की कहानियाँ दिलचस्प हैं ।ये भारतवंशी अनुबंधित मजदूर प्रायः सामान्य सहमति से नहीं गये थे, अधिकांश बेहतर ज़िन्दगी की उम्मीद में अचानक निकले थे । इन सभी के पास अपनी सांस्कृतिक स्मृतियों के सिवाय अगर कोई बेहद बहुमूल्य चीज़ थी, तो वह थी तुलसीदास की लिखी रामचरितमानस ।

आज कैरिबियन देशों में जितने भी हिन्दू बचे हैं, उनके धर्म की धारणा को पिचले डेढ़ सौ सालो से कायम रखने में रामचरितमानस की सबसे बड़ी भूमिका है । शेरी एन सिंह कहती हैं कि रामचरित मानस ने अपने चरित्रों के माध्यम से उचित और अनुचित ही नहीं सही-गलत कर्म की शिक्षा भी दी । बीसवीं सदी के मध्य तक इसे 'पंचम वेद' के रूप में उद्घृत किया जाता था । दरअसल रामचरित मानस

में चरित्रों की बनावट और बुनावट दोनों इतने मुकम्मिल हैं कि वे जन मानस में आसानी से घुल जाते है । रामचरितमानस ऊपर से देखने में सरल और नैतिक दीखता है, पर यह अपनी सहजता में एक रहस्य की निर्मिति भी करता है, जो किसी धार्मिक पाठ्य के लिए जरूरी होता है । रामचरितमानस की छाप और स्मृति गिरमिटिया प्रवासियों में किसी भी कल्पना से ज्यादा गहरी और स्थायी है । परिवार, समाज, से लेकर परिस्थितियों तक में इसके आदर्श रास्ता दिखाते प्रतीत होते हैं, फिर वह आदर्श राजा हो या आदर्श भाई । ऐसा नहीं कि रामचरितमानस अन्य धार्मिक ग्रंथों की तरह सिर्फ आदर्श का महिमा मंडन करने वाली रचना हो बल्कि, इसके स्याह पात्र और उनकी नियति आदर्श मूल्यों की स्थापना जन मानस में बेहद प्रभावी ढंग से करते हैं ।

भगवतगीता भी हिन्दी कथा-संस्कृति का एक बेहतरीन उदाहरण है । इस दार्शनिक रचना का ताना बाना कहानी की चादर में लिपटा है । इसे समझने की जरूरत है, यह भारतीय संस्कृति का महत्वपूर्ण आयाम है ।

बॉलीवुड : भारतीय अस्मिता की वैश्विक अपील :

बालीवुड प्रवासी के भारतीय जुड़ाव का सबसे बड़ा स्रोत है । इसकी पहुँच ग्लोबल है । बालीवुड संसार में सबसे ज्यादा फिल्मे बनाने वाला फिल्में उद्योग ही नहीं बल्कि इसकी पहुँच और प्रभाव भी महत्वपूर्ण हैं । कहते हैं कि जहाँ अंग्रेजी फिल्में भी नहीं पहुचीं, वहाँ बालीवुड की उपस्थिति है । इसका सबसे बड़ा कारण इसका नेरेटिव और उसका खास ट्रीटमेंट है । यह भारतीय संस्कृति का भी नेरेटिव है । इसकी ग्लोबल पहुँच का दूसरा महत्वपूर्ण कारण यह है कि यह समय और लोक परिदृश्य के अनुसार बदलता रहा है । दरअसल हिन्दी फिल्में भारतीय डायस्पोरा की सांस्कृतिक वंचना की भूख को बेहद प्रभावी ढंग से पूरा करती हैं । हिन्दी फिल्मों का संगीत इसका बेहद मज़बूत पक्ष है ।

कैरिबियाई भारतवंशी इस मायने में अलग रहे हैं कि उनका यूरोपीय और अमेरिकी भारतीय डायस्पोरा की तरह भारत से जीवित संपर्क नहीं रहा है । ऐसे में मिट्टी की भूख को मिटाने का जरिया

बॉलीवुड की फिल्में और गाने ही थे। यह बात पूरे विश्व के भारतवंशियों के सन्दर्भ में भी प्रासंगिक है। कैरिबियाई भारतवंशी समुदाय के लिए हिन्दी सिनेमा मनोरंजन मात्र नहीं था। उनके लिए यह एक समर्थ सांस्कृतिक ब्रांड भी था।

हिन्दी फिल्मों का जितना बड़ा बाज़ार भारत में है विदेशो भी उतना ही बड़ा बाज़ार है। यह लगातार बढ़ रहा है। हाल के वर्षो में कई हिन्दी फिल्मे भारत से ज्यादा विदेशो में सफल रही है। इसकी वजह यह कि ये हमारे संवेदना और सरोकारों के काफी करीब हैं। बालीवुड को यह सफलता तकनीक की ताकत से नहीं, बल्कि ज़ज्बात के नेरेटिव को ख़ास अंदाज़ में कहने से मिली है, इसकी जबाँ ग्लोबल है। यही कारण है कि अफ्रीका से ले कर एशिया तक सभी जगहों पर का नेरेटिव लोगों को छूता है।

हिन्दी अस्मिता का संगीत : चटनी :

'चटनी' शब्द भारतीयों के स्वाद ग्रंथि को जगाने वाला है। दक्षिणी कैरिबियाई देशो में 'चटनी' एक व्यंजन नहीं, बल्कि वहाँ का लोकप्रिय संगीत है। इसीलिए 'चटनी' कहते ही लोग यहाँ के संगीत का जिक्र करने लगते हैं। कैरेबियाई भारतीय समुदाय में अपनी भाषा ख़त्म होने की प्रक्रिया में सांस्कृतिक-अभा,व तो बढ़ा किन्तु इसी पृष्ठभूमि में 'चटनी' जैसे सांस्कृतिक प्रतीक की उत्पत्ति भी हुई। त्रिनिदाद का यह विरोधाभास कई मायनों में दिलचस्प है; क्योंकि यहाँ भोजपुरी 'संवाद' से कल्चरल डोमेन कि भाषा हो गयी है। यह सब इसलिए संभव हो पाया कि त्रिनिदाद के भारतवंशी समुदाय को अपनी सांस्कृतिक अस्मिता से लगाव था।

ईस्ट इंडियन समुदाय में 'चटनी' के विकास की कहानी बेहद दिलचस्प है। सन् 1962 तक भारतीय समुदाय के लोग खेतों के पास सामूहिक रूप से रहा करते थे, जो भारत में उत्तर प्रदेश व बिहार के भोजपुरी भाषी क्षेत्रों से आये थे। भोजपुरी भाषी होने और अन्य समुदायों से अलग रहने के कारण कैरिबियाई ईस्ट इंडियन समुदाय में पारंपरिक भोजपुरी लोकगीतों की परंपरा प्रचलित थी।

त्रिनिदाद या कैरेबियन में 'चटनी' के लोकप्रिय होने का समय वही है, जब ईस्ट इंडियन समुदाय मुख्य धारा में शामिल होने की कोशिश कर रहा था ।इनमें अपनी अगली पीढ़ी को शिक्षित करने ,अंग्रेजी सिखाने की कोशिश शामिल थी।इन सभी के साथ भारतीय परम्परा को जारी रखने की चाह से जो विरोधाभास उभरा उसकी अभिव्यक्ति 'चटनी' संगीत है। पारंपरिक भोजपुरी लोकगीतों की धीमी लय व ताल की जगह 'चटनी' संगीत में लय और बीट तेज होते थे जैसे-जैसे 'चटनी' लोकप्रिय होकर भारतीय प्रवासियों के दायरे से बाहर निकली वैसे-वैसे इसमें नये प्रयोग होने लगे। इसमें भारतीय वाद्यों के साथ गिटार, सिंथेसाइजर, स्टील पैन और ड्रम का प्रयोग होने लगा। शुरू के गीतों में भोजपुरी वाक्यों में अंग्रेजी के शब्द होते थे लेकिन धीरे-धीरे अंग्रेजी के शब्द बढ़ते गये और वाक्य का ढाँचा अंग्रेजी का हो गया और उसमें शब्द हिन्दी के। 'चटनी' के नामकरण के बारे में तमाम बातें बतायी जाती हैं। दरअसल 'चटनी' की तेज धुन पूर्वी -पचिमी वाद्यों के मिश्रण के साथ 'चटनी' के चटखारे- बोल के कारण इसकी तुलना 'चटनी' से होने लगी और यही नाम भी हो गया।

हिन्दी का बाज़ार : बाज़ार का विकास :

हिन्दी के भविष्य और भविष्य की हिन्दी के लिए सबसे बड़ी बात इसे बोलने वालों की संख्या है। यह संख्या सारे अनुमानों से इसलिए भी ज्यादा है ; क्योकि भाषा के सारे सर्वेक्षण मातृभाषा के अनुमानों पर आधारित हैं, जबकि हिन्दी उन लोगो की भी भाषा है, जो अपनी अलग मातृभाषा होने के बावजूद भी हिन्दी को समझते और इसका व्यवहार करते हैं। हिन्दी का बाज़ार वह बाज़ार है, जो अभी विकासशील है। इसके विकास का बड़ा स्पेस खाली है। इसलिए बाज़ार को संवाद के लिए हिन्दी की ज़मीन पर ही संवाद करना होगा।

टेक्नोलॉजी भाषा और संस्कृति :

हिन्दी में इन्टरनेट इस्तेमाल करने वालों की संख्या दूसरे स्थान पर है , यह स्थिति तब है जब भारत में इन्टरनेट का घनत्व ज्यादा नहीं है और भाषा के स्थानीकरण का बड़ा काम बाकी है। यह बड़ा बाज़ार भाषा के स्थानीकरण की सबसे बड़ी उम्मीद है। कहते हैं कि प्रयोग और जरूरत दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। इन दोनों को साकार करने का काम बाज़ार कर रहा है। हिन्दी का कन्टेन्ट वेब पर उस तरह समृद्ध नहीं है, जैसा तमाम अन्य भाषाओ का। इसकी तमाम वजहें रही हैं। पर अब बदलाव हो रहा है। इस लिए उम्मीद की जा सकती है कि टेक्नोलॉजी या कंप्यूटर पर हिन्दी का इंटरफेस बेहतर और समर्थ ही नहीं, बल्कि समृद्ध भी होगा।

निष्कर्ष :

सबसे ख़ास बात यह है कि हमारे मन के बीच हृदय के समझ की संस्कृति है। संस्कृति धर्म दर्शन और ज्ञान जैसे तमाम क्षेत्र में भारत अनूठा है। भारत के प्रति दुनिया और पश्चिम की दिलचस्पी कायम ही नहीं बल्कि बढ़ रही है। इसके पारम्परिक ज्ञान को नयी दृष्टि से देखा जा रहा है। पारम्परिक ज्ञान और समझ के प्रति लोगों की धारणा बदल रही है। इसी के परिणामस्वरूप पश्चिम की तमाम समस्याओं का समाधान पूरब की समझ और ज्ञान में दिखायी देता है। डायस्पोरा की अस्मिता के संदर्भ में संस्कृति और भाषा का अहम आयाम हैं। हिन्दी भाषा और संस्कृति हिन्दी डायस्पोरा समाज में अपनी भूमिका बखूबी से अदा कर रही है।

ग्रंथ-सूची:

Anderson, Benedict.Imagined communities Reflections on the origin and Spread of Nationalism. Verso, 2006

Erikson, E. H. Identity: Youth and crisis. New York, NY: Norton Erikson, 1968.

Gandhi,M.K.The Voice of Truth: The Selected Works of Mahatma Gandhi. Ahemadabad: Navajivan Publishing House,1968

Rolland, Romain.The Oxford Centre for Hindu Studies at www.ocvhs.com

https://future.internetsociety.org/2016/wp-content/uploads/2016/11/ISOC_GIR_2016-v1.pdf

संपर्क-सूत्र:
विजिटिंग प्रोफेसर
(हिन्दी चेयर, भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद्, नई दिल्ली)
यूनिवर्सिटी आफ केलानिया, श्री लंका
ई-मेइल: doctordpsingh@gmail.com